हिंदी कहानी आलोचना में प्रेमचंद तथा उनके प्रतिमान

निकिता आनंद

शोध छात्रा, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली

सार

हिंदी कहानी आलोचना में जब हम प्रतिमान को समझने या ढूँढ़ने की कोशिश करते हैं तो बेशक यह प्रेमचंद की कहानियों को समझे बिना संभव नहीं है। उनकी सभी कहानियों को देखने पर हमें कुछ सामान्य प्रतिमान स्पष्ट होते दिखाई पड़ते हैं। उनकी ज्यादातर कहानियों का विषय तथा जीवनदृष्टि एक जैसे साँचे में ढला हुआ प्रतीत होता है- नारी संबंधी, ग्राम संबंधी, मनोविज्ञान संबंधी आदि कहानियाँ। इन कहानियों को देखकर यह स्पष्ट होता है कि प्रेमचंद की कहानियाँ अपने क्षेत्र में अधिक प्रसारित तो नहीं परंतु प्रगतिशील हैं।

शब्द कुँजी: मूल्यांकन, सांस्कृतिक, प्रगतिशील, व्यापक, जीवनदृष्टि

सन् 1906 से सन् 1936 के बीच प्रेमचंद द्वारा लिखा गया कथा-साहित्य इन तीस वर्षों का सामाजिक सांस्कृतिक दस्तावेज है। इतना ही नहीं बल्कि 1918 से 1936 तक का पूरा कालखंड ही 'प्रेमचंद युग' से जाना जाता है, परंतु इसके लिए उन्हें अपने वास्तविक नाम धनपत राय से नवाब राय और फिर प्रेमचंद तक का लंबा सफर तय करना पड़ा। जिसमें साहित्य के द्वारा वे उस समय के समाज के विभिन्न पहलुओं को दिखाने की कोशिश करते हैं- छूआछूत, जाति भेद, अनमेल विवाह आदि जो आज भी हमारे समाज में कहीं-न-कहीं तथा किसी-न-किसी रूप में व्याप्त है। आज भी उनकी कहानियाँ हमारे आस-पास की घटनाओं के जीवित रूप को चित्रित कर प्रासंगिक होती दिखाई पड़ती हैं। अपने रचना-काल में प्रेमचंद ने लगभग तीन सौ हिंदी कहानियों की रचना की है। जो 'मानसरोवर' के भागों में संकलित है। इसके अतिरिक्त उनकी उर्दू कहानियों की संख्या भी सौ से ऊपर है। इन्हें हिंदी और उर्दू दोनों कथा-साहित्य के विकास का सूत्रधार माना गया है।

1907 में प्रेमचंद का पहला कहानी-संग्रह, 'सोज़-ए-वतन' (देश का मातम) प्रकाशित हुआ। इस संग्रह में पाँच कहानियाँ थीं। दुनिया का सबसे अनमोल रतन, शेख मखमूर, यही मेरा वतन है, शोक पुरस्कार और सांसारिक प्रेम है। पाँचों कहानियाँ, उर्दू भाषा में थी। 1910 में उनकी इस रचना के बारे में अंग्रेजों को पता चल गया। आजादी की जंग से जुड़ी इन कहानियों को देशद्रोही करार दिया गया। सोज़-ए-वनत की सारी प्रतियाँ जलाकर नष्ट कर दी गयीं और नवाब राय को हिदायत दी गयी कि अब वे कुछ भी लिखेंगे तो जेल भेज दिए जाएँगे। उस समय उर्दू में प्रकाशित होने वाली जमाना पत्रिका के सम्पादक और उनके दोस्त मुंशी दयानारायण निगम ने उन्हें प्रेमचंद नाम से लिखने की सलाह दी, तभी से वे प्रेमचंद नाम से लिखने लगे। हिंदी में उनकी पहली कहानी 'सौत' (1915) में तथा पहला लघु कथा संग्रह, 'सप्त सरोज'(1917) में सरस्वती नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई। इसके साथ ही 31 मई 1934 को हिंदी फिल्म जगत में अपनी किस्मत आजमाने वे मुंबई पहुँचे। पटकथा लेखक के तौर पर उनकी पहली फिल्म मोहन भवनानी द्वारा निर्देशित 'मजदूर' थी।

प्रेमचंद ने 'साहित्य का उद्देश्य' में कहानी कला पर अपने तीन लेखों में एक कहानीकार के नाते अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इन लेखों से इतना तो साफ हो जाता है कि उस समय हिन्दी-कहानी की क्या स्थिति थी और किस उद्देश्य को लेकर उसकी रचना होती रही। इस तरह प्रेमचंद न केवल अपनी कहानी-कला के उद्देश्य को स्पष्ट करते हैं, बल्कि अपनी परंपरा की कहानी की रचना प्रक्रिया को भी उजागर करते हैं।

जब हम हिंदी कहानी आलोचना में प्रतिमानों के विकास को समझना चाहते हैं तो बेशक प्रेमचंद की

कहानियों को समझे बिना संभव नहीं है क्योंकि हिंदी साहित्य में प्रेमचंद की कहानियों से ही लोगों में कहानी-विधा के प्रति दिलचस्पी प्रारंभ हुई, परंतु कहानियों के प्रतिमानों की जब बात आती है तो हमारे सामने अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। जो कहानी के विभिन्न स्वरूपों पर बात करते हुए तो मिलती है परंतु कहानी के विकास में आलोचनात्मक प्रतिमानों का निर्धारण करने से चूक जाती है। जिस प्रकार जीवन की गति में सहायक होने के लिए जीवन के कई प्रतिमान समय के हिसाब से बदलते रहते हैं। उसी प्रकार कहानी के प्रतिमानों में भी बदलाव आते रहते हैं जो कहानी कला की गति को दर्शाते हैं। यह प्रतिमान अगर आलोचनात्मक रूप में सामने आते हैं तो उस विधा के विकास में अधिक सहायक होते हैं। उपर्युक्त कथन के परिप्रेक्ष्य में प्रेमचंद की लखनऊ में हुए, 'प्रगतिशील लेखक संघ' के पहले अधिवेशन (1936) में सभापति आसन से दिया गया भाषण बड़ा सटीक जान पड़ता है- ''साहित्य की बहुत सी परिभाषाएँ की गई हैं, पर मेरे विचार से उसकी सर्वोत्तम परिभाषा 'जीवन की आलोचना' है। चाहे वह निबन्ध के रूप में हो, चाहे कहानियों के या काव्य के, उसे हमारे जीवन की आलोचना और व्याख्या करनी चाहिए।''[1] इस प्रकार हिंदी कहानी में प्रेमचंद और उनके प्रतिमानों को समझने के लिए उनकी कहानियों का भी आलोचनात्मक मूल्यांकन आवश्यक है।

प्रेमचंद की सभी कहानियों में से बिना किसी विशेष वर्गीकरण के चुने गए कुछ कहानियों को देखने पर हमें कुछ सामान्य प्रतिमान स्पष्ट होते दिखाई पड़ते हैं। उनकी ज्यादातर कहानियों का विषय तथा जीवनदृष्टि एक जैसे साँचे में ढला हुआ प्रतीत होता है-नारी संबंध ी कहानियाँ (बड़े घर की बेटी, शान्ति, आहुति) आदि, ग्राम संबंधी कहानियाँ (पूस की रात, अलग्योझा) आदि, मनोविज्ञान संबंधी कहानियाँ (बड़े भाई साहब, समर यात्रा) आदि। इन कहानियों को देखकर यह स्पष्ट होता है कि प्रेमचंद की कहानियाँ अपने क्षेत्र में बहुत अधि क प्रसारित नहीं हैं, परंतु प्रगतिशील हैं। ''प्रेमचंद की मुख्य प्रेरणा, जिसके आधार पर उन्होंने कहानियों का निर्माण किया, प्रगतिशील थी। वह समाजहित और समाजोत्थान की भावनाओं से प्रेरित थे।''[2]

इनकी कहानियों को देखते हुए लगता है कि इनकी सारी कहानियाँ एक लंबे समय के अंतराल पर लिखी गई हैं, इस कारण कलात्मक विकास के कई रूप दिखाई पड़ते हैं। आरंभिक कहानियाँ ज्यादातर लंबी और वर्णनात्मक हैं, उदाहरणस्वरूप- अलग्योझा। जबकि बाद की कहानियाँ गठी हुई प्रतीत होती हैं, उदाहरणस्वरूप- पूस की रात। सिर्फ कला की दृष्टि से ही नहीं, भावों और विचारों की दृष्टि से भी उनकी पहले और बाद की कहानियों में स्पष्ट अंतर नजर आता है। भाव के दृष्टिकोण से अगर हम देखें तो आरंभिक कहानियाँ भावना प्रधान और आदर्शवादी हैं, जैसे- पंच परमेश्वर, बूढ़ी काकी आदि। ऐसी कहानियाँ हर स्थिति में किसी-न-किसी रूप में ऊँचे आदर्श पर ही जाकर समाप्त होती हैं। उनका प्रभाव भावुकतापूर्ण और उपदेशात्मक ही होता है, परन्तु उनकी कहानियों में कोरा आदर्शवाद कतई नहीं दिखाई पड़ता है। प्रेमचंद की अधिकांश कहानियों में मनुष्य गिर-गिर कर ऊँचा उठता है क्योंकि वे अपनी कहानियों में किसी विचार के बदले लोगों की वास्तविक जिंदगी लिखते थे। किंतु बाद की कहानियों में चित्रित परिस्थितियों और व्यक्त भावों के बीच अधिक सामंजस्य स्थापित होता गया। आगे आने वाली उनकी कहानियाँ मनोवैज्ञानिक दिशा की ओर मुड़ती नज़र आती हैं। प्रेमचंद के अनुसार- ''सबसे उत्तम कहानी वह होती है, जिसका आधार मनोवैज्ञानिक सत्य हो।''[3]

इन कहानियों में प्रेमचंद किसी आदर्शवाद की स्थापना न करके 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद' की परिपाटी पर काम करते देखे गए। मनोविज्ञान पर आश्रित होने के कारण प्रेमचंद की कहानियों में आदर्श और यथार्थ को विशेष स्थान मिला है। उनका दृष्टिकोण चरित्र-चित्रण और कथावस्तु में यथार्थवादी है परंतु दृष्टिकोण में आदर्शवादी है। वे समाज में यथार्थ को तो देखना चाहते हैं परंतु आदर्शवाद का दामन भी नहीं छोड़ना चाहते हैं। प्रेमचंद कहते हैं कि ''यथार्थवाद यदि हमारी आँखें खोल देता है, तो आदर्शवाद हमें उठाकर किसी मनोरम स्थान में पहुँचा देता है। लेकिन जहाँ आदर्शवाद में यह गुण है, वहाँ इस बात की भी शंका है कि हम ऐसे

चरित्रों को न चित्रित कर बैठे जो सिद्धान्तों की पूर्तिमात्र हों-जिसमें जीवन न हो। किसी देवता की कामना करना मुश्किल नहीं है, लेकिन उस देवता में प्राण-प्रतिष्ठा करना मुश्किल है।''[4] उनके अनुसार यथार्थ को सजीव बनाने के लिए आदर्श का उपभोग होना ही चाहिए। ''इस काल की अधिकांश कहानियों में हमें पात्र और उनका परिवेश तो यथार्थ दिखाई देता है लेकिन इन पात्रों का आचरण और उसे प्रभावित करने वाली सोच अपने मूल रूप में यथार्थ-विरोधी ही हैं-कोई चाहे तो रिवाज के मुताबिक उसे 'आदर्शवादी' भी कह सकता है।''[5] ''प्रेमचंद की कहानियों में मनोविज्ञान का प्रयोग प्राय: बाह्य जगत् के द्वन्द्धों का चित्रण करने में हुआ है। अन्तर्जगत में उनकी पैठ पूरी नहीं है। इसलिए आन्तरिक संघर्ष का अभाव है।''[6] जैसे- बड़े भाई साहब, आत्माराम तथा मनोवृत्ति आदि। इन कहानियों में मनोविज्ञान अन्त: प्रवृत्ति प्रधान न होकर घटना प्रधान है। उन्होंने अपने युग की आवश्यकता के अनुसार ही अपनी कहानियों में मनोविज्ञान, यथार्थवाद या फिर आदर्शवाद को समाहित किया।

विषय की दृष्टि से देखने पर प्रेमचंद की कहानियाँ मुख्यत: सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रों से संबंधित हैं। सम-सामयिक सामाजिक आंदोलनों और राजनीतिक गतिविधियों के बाहर अपनी कहानियों में बहुत कम ही गए हैं। प्रेमचंद का कहना है कि ''अगर लेखक अपनी आँखे खुली रखें, तो उसे हवा से भी कहानियाँ मिल सकती हैं। रेलगाड़ी में, नौका पर, समाचार पत्रों में, व्यक्तियों की बात-बीच में और हजारों जगहों से खूबसूरत कहानियाँ बनाई जा सकती हैं।''[7]

इसके अलावा कहानी-लेखन की प्रवृत्ति पर ही प्रेमचंद कहते हैं कि-''जब तक करेंट अफेयर से लगाव न रहे, किसी मजमून पर लिखने की तहरीक नहीं होती और मजमून मुश्किल से सूझता है।''[8] प्रेमचंद के उपर्युक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने अपनी कहानियों में सामाजिक मुद्दों एवं समस्याओं पर ज्यादा बल दिया है। वहीं मानव-विकास के पहलुओं पर उनका ध्यान नहीं गया है। उनकी प्राय: सभी कहानियाँ सामाजिक पृष्ठभूमि पर वर्णनात्मक शैली में लिखी गई हैं। उनमें शैलीगत समानता भी देखने को मिलती है। साधारण और व्यापक दृष्टि से तो उनकी कहानियाँ श्रेष्ठ हैं किंतु जब हमारा ध्यान सूक्ष्मता और विशिष्टता की ओर जाता है तो इसमें प्रेमचंद उतने सफल होते नजर नहीं आते हैं।

प्रेमचंद अपनी कहानियों में किसी भी प्रकार के नियम या प्रतिमानों का प्रयोग नहीं करते थे। एक बार जैनेन्द्र जी से उन्होंने कहा था-''कहानी हृदय की वस्तु है, नियम की वस्तु नहीं है। नियम हैं और वे उपयोगी होने के लिए हैं। हृदय के दान में जब वे अनुपयोगी हो जाएँ तब बेशक उन्हें उल्लंघनीय मानना चाहिए।''[9] इससे स्पष्ट होता है कि उनकी कहानियों का नियम कभी भी भावों के प्रस्तुतीकरण में बाधक नहीं बना। इसलिए उनकी कहानियों का गठन भी हर जगह एक सा नहीं दिखाई पड़ता है जैसा चरित्र का दिखाई पड़ता है। कहीं-कहीं यह नायक के जीवन-चरित्र की भाँति हो जाता है, जैसे कि प्रेमचंद अपने नायक के बारे में हमें सब कुछ बता देना चाहते हैं-उदाहरण स्वरूप: 'बड़े भाई साहब' कहानी।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल इस कहानी पर विचार करते हुए कहते हैं कि- ''प्रेमचंद की एक कहानी है 'बड़े भाई साहब' जिसमें चरित्र-चित्रण के अतिरिक्त कुछ है ही नहीं। जिस संग्रह के भीतर यह कहानी है, उसकी भूमिका में प्रेमचंद जी ने कहानी विकास को बड़ा भारी कौशल कहा है।''[10]

इस प्रकार यह कहना गलत न होगा कि प्रेमचंद ने हिंदी-साहित्य के क्षेत्र में कहानी को जन-जन में लोकप्रिय बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। उर्दू के मशहूर शायर फ़िराक गोरखपुरी कहते हैं कि-''यदि हम प्रेमचंद के बारे में यह कहें कि उनकी कलम जादू का सा काम करती थी तो यह उनके संबंध में कोई बड़ी बात न होगी। उनके प्रत्येक पृष्ठ में सभ्यता के प्रवर्तकों के पहले कदमों की चाप सुनाई देती है।''[11] प्रेमचंद के देहावसान के बाद पहली बार हिंदी-साहित्य में गतिरोध की बात सुनाई दी थी। क्योंकि जब कोई बड़ा साहित्यकार अपने कार्य-क्षेत्र से उठ जाता है तो कोई दूसरा तत्काल उसकी जगह नहीं ले पाता है। हिंदी कहानी के क्षेत्र में प्रेमचंद ऐसी ही हस्ती हैं जिन्होंने न सिर्फ हिंदी कहानी को एक नई पहचान दी बल्कि

अपने लेखन के इतने वर्षों के बाद आज भी बच्चों, व्यस्कों और प्रौढ़ो सभी के बीच अपनी जगह बनाए हुए हैं।

निष्कर्षः

हिंदी कहानी में जब हम किसी कहानीकार की बात करें तो इतने वर्षों बाद आज की पीढ़ी में भी हिंदी कहानी पढ़ने की शुरुआत प्रेमचंद की ही कहानियों से होती है, परंतु जब हम उनकी कहानियों में प्रतिमान को ढूँढ़ने की कोशिश करते हैं तो कुछ सामान्य प्रतिमान मिलने के अलावा हमें निराशा ही हाथ लगती है। इसका कारण यह है कि ये कहानी को नियम या प्रतिमान की वस्तु न मानकर हृदय की वस्तु मानते थे। फिर भी हिंदी कहानी में अपने बाद के कहानीकारों के लिए शुरुआती पैमाना तैयार करने का श्रेय अगर प्रेमचंद को दिया जाए तो यह गलत न होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूचीः

1. साहित्य का उद्देश्य- प्रेमचंद, अनुराग प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण-2017, पृष्ठ 2
2. प्रेमचंद : साहित्यिक विवेचन- वाजपेयी नन्ददुलारे, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण-2000, पृष्ठ 111
3. वही
4. साहित्य का उद्देश्य- प्रेमचंद, अनुराग प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण-2017, पृष्ठ 43
5. हिन्दी कहानी का विकास - मधुरेश, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, दसवाँ संस्करण-2020, पृष्ठ 27
6. प्रेमचंद परिचर्चा- लोढ़ा एवं तिवारी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रकाशन वर्ष-1979-80, पृष्ठ 9
7. साहित्य का उद्देश्य - प्रेमचंद, अनुराग प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण-2017, पृष्ठ 48
8. प्रेमचंद कथा-साहित्य : समीक्षा और मूल्यांकन- डॉ. धर्मध्वज त्रिपाठी, प्रेम प्रकाशन मंदिर, दिल्ली, आवरण- जोशी प्रथम संस्करण-1992, पृष्ठ 140
9. प्रेमचंद और उनका युग-रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण-1952, चौथी आवृत्तिः 1981, पृष्ठ 115
10. हिंदी साहित्य का इतिहास- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल अनुपम प्रकाशन, पटना, संस्करण-2015, पृष्ठ 370
11. प्रेमचंद 140 : 16 वीं कड़ी : क्या प्रेमचंद साहित्य में कोरा आदर्शवाद है- **अपूर्वानंद**
12. https://m.satyahindi.com/article/literature/140-years-of-premchand-premchand-on-truth-and-power2/112553